श्री सूक्त

लेखक-अरुण कुमार उपाध्याय

ऋग्वेद खिल भाग (अष्टक ४/४/३२ के बाद का परिशिष्ट)

श्री हरनारायण भाई पाण्ड्या की टीका के आधार पर (द्वारका पीठ से प्रकाशित) क्वचिदन्यतोऽपि।

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्ण रजतस्रजाम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१॥

पाठभेद-(१) स्रजम् -लक्ष्मी तन्त्र, (२) ममा -काशीकर सम्पादित।

अर्थ-सुनहरे एवं पीले वर्णवाली, सुवर्ण पुष्पों एवं चान्दी के पुष्पों की मालायें पहनी हुयीं, चन्द्र सी आह्लादक, सुवर्णमय देहवाली, लक्ष्मी को, हे सर्वज्ञ अग्निदेव! मेरे पास लाओ, भेजो।

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम्॥२॥

पाठभेद-(१) लक्ष्मीमलप-काशीकर, संस्कार भास्कर, (२) गामश्वान्-काशीकर, (३) लक्ष्मी तन्त्र में अनपगामिनीम् है, पर बाद में अनपायिनीयम् पाठ का प्रचलन लगता है। तुलसीदास ने रामचरितमानस में लिखा है- नाथ भगति अति सुखदायनी। देहु कृपा करि अनपायनी॥ (सुन्दर काण्ड, ३३/१)

अर्थ-हे सर्वज्ञ अग्नि देव! स्थिर और अविनाशी लक्ष्मी को मेरे पास बुलाइये, जिसके आने के बाद मैं सोना, चान्दी, गायें, घोड़े आदि पशु समूह और अनुकूल पुत्र, हितैषी मित्र, निष्ठावान् दास आदि को प्राप्त करूँ।

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनाद प्रबोधिनीम्। श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्॥३॥

पाठभेद-(१) अश्वपूर्वाम्-विद्यारण्य। अश्वपूर्णाम्-काशीकर, पृथ्वीधराचार्य। (२) नादप्रमोदिनीम्-काशीकर, संस्कार भास्कर। नादविनादिनीम् (लक्ष्मी तन्त्र)। (३) देवीर्जुषताम्-काशीकर, पृथ्वीधराचार्य, संस्कार भास्कर।

अर्थ-जिसके आगे घोड़े दौड़ रहे हैं, हाथियों की चिग्घाड़ से जिसकी भव्यता प्रतीत होती है, और जो रथ के मध्य भाग में विराजमान हैं, ऐसी देदीप्यमान (सेनारूपा) राजलक्ष्मी को मैं बुलाता हूँ, जो देवी मुझ पर प्रीति करें, मेरा सेवन करें, मेरे घर सप्रेम रहें।

कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्।

पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम्॥४॥

पाठभेद-(१) कां सोस्मितां-लक्ष्मी तन्त्र। कांस्यास्मि तां-ऋग्। (२) प्रवारा-ऋग्। प्राकारा-काशीकर।

अर्थ-वाणी एवं मन से अनिर्वचनीय स्वरूप वाली, मन्दस्मित वाली, सुनहरे रंग वाली (अथवा सुवर्ण स्वरूपा), स्नेहपूर्ण, चिन्तातुर, शाश्वत तृप्त, अपने भक्त को चिरन्तन तृप्ति देने वाली, कमल में स्थित एवं कमल जैसी कान्ति वाली लक्ष्मी देवी को यहाँ मैं अपने पास बुलाता हूँ।

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्।

तां पद्मिनीमीं शरणं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे॥५॥

पाठभेद-(१) पद्मनेमिं-ऋग्। पद्मनेमीं-ऋग्, लक्ष्मी तन्त्र, संस्कार भास्कर। (२) शरणं प्रपद्ये-ऋग्। (३) अलक्ष्मीर्मे-ऋग्। प्रपद्येऽलक्ष्मीर्मे-विद्यारण्य। (४) वृणोमि-ऋग्। (५) प्रभासाम्-लक्ष्मी तन्त्र। यशसाम्-लक्ष्मी तन्त्र।

अर्थ-मैं यहाँ अत्यन्त कान्तिमान्, १४ लोकों में कीर्ति से देदीप्यमान् (प्रकाशमान), देवों से सेवित, उदार, हाथ में कमल लिये, एवं चन्द्रमा जैसी प्रकाशित (या आह्लादक), उस श्रीदेवी की शरण में जाता हूँ, जो मेरी अलक्ष्मी दूर करें। (हे जननि!) मैं आपका वरण करता हूँ (अर्थात् शरण में आया हूँ)।

आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तववृक्षोऽथ बिल्वः।

तस्य फलानि तपसा नुदन्तु ममान्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः॥६॥

पाठभेद-(१) तस्य, यस्य-काशीकर। (२) मायान्तरा, मा या अन्तरा। ममान्तरा-काशीकर।

अर्थ-हे सूर्य सी तेजस्विनी लक्ष्मी माता! आपकी तपस्या के द्वारा आपके हाथ से आपके निवास योग्य बिल्व वृक्ष उत्पन्न हुआ है। उस वृक्ष के फल, आपके अनुग्रह से मेरे भीतरी अज्ञान एवं उसके कार्य जात और बाह्य (दारिद्र्य आदि) अलक्ष्मियों को दूर करे।

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह। प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रेऽस्मिन् कीर्त्तिमृद्धिं ददातु मे॥७॥

पाठभेद-(१) भूतोऽस्मि राष्ट्रे, भूतो सुराष्ट्रे-काशीकर (२) कीर्तिमृद्धिं, कीर्ति वृद्धिं। (३) कीर्ति वृद्धिं ददातु की जगह श्रीः श्रद्धां ददातु-काशीकर। लक्ष्मी तन्त्र में ऋद्धि

अर्थ-कुबेर और कीर्ति, चिन्तामणि के साथ मेरे पास आयें (अर्थात् मुझे मिलें)। मैं इस राष्ट्र में उत्पन्न हुआ हूँ। वे (कुबेर) मुझे कीर्ति और ऋद्धि दें।

क्षुत्पिपासामला ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्।
अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात्॥८॥

पाठभेद-(१) क्षुत्पिपासामलां-विद्यारण्य, काशीकर। क्षुत्पिपासामला ज्येष्ठामलक्ष्मीं-ऋग्, काशीकर। क्षुत्पिपासामला ज्येष्ठामलक्ष्मीर् (काशीकर, श्रीविद्यार्णव, अंस्कार भास्कर। क्षुत्पिपासामलं ज्येष्ठामलक्ष्मीर्-काशीकर। (२) गृहात्-के बदले-पाप्मानं-तैत्तिरीय आरण्यक, काशीकर।

अर्थ-भूख प्यास से मलिन बड़ी बहन अलक्ष्मी को मैं नष्ट करता हूँ। (हे लक्ष्मी देवी, आप) सर्व असम्पत्ति और असमृद्धि को मेरे घर से उठा कर फेंक दें।

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टा करीषिणीम्।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥९॥

पाठभेद-नहीं है।

अर्थ-सुगन्धित, अपराजेये, नित्य समृद्ध, गाय, अश्व, आदि बहुत पशुओं से समृद्ध और सभी भूतों की स्वामिनी लक्ष्मी जी को मैं यहां बुलाता हूँ।

मनसः काममाकूतं वाचः सत्यमशीमहि।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः॥१०॥

पाठभेद-(१) माकूतिं, माकूतं-काशीकर। मन्नस्य, मन्त्रं च-काशीकर। मन्यस्य-संस्कार भास्कर। (मन्नस्य-वाज. संहिता)

अर्थ-मनोरथ, संकल्प, वाणी का सत्य, पशुओं के दूध आदि, (अथवा पशुओं का समूह अथवा पशुओं के साथ आत्मीयता) और (पञ्चविध) अन्न हम प्राप्त करें। सम्पत्ति एवं यश मेरा आश्रय लें। (पृथ्वीधर के अनुसार-महामनोरथ, सन्तोष, वाणी की यथार्थता, पशुओं आदि की अधिकता, भक्ष्य भोज्य आदि अन्न और यश, जिसके द्वारा हम प्राप्त कर सकें, ऐसी लक्ष्मी देवी मेरे समीप में रहें!)।

कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दम। श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्॥११॥

पाठभेद-(१) सं भव, सं भ्रम-काशीकर, श्रीविद्यार्णव, संस्कार भास्कर। (२) मे कुले, मे गृहे।

अर्थ- (लक्ष्मी जी) स्वयं अपने पुत्र कर्दम के कारण पुत्रवती हैं। इसलिए हे कर्दम! आप मेरे घर में निवास करें और उस कमल-माला वाली माता श्रीदेवी का मेरे वंश में निवास करायें।

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे। नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले॥१२॥

पाठभेद-(१) स्रजन्तु, स्रवन्तु-ऋग्। सृजन्ति-श्री विद्यार्णव। सृजन्तु-विद्यारण्य। (२) नी च -संस्कार भास्कर।

अर्थ-जल -लक्ष्मी (मेरे घर में) स्नेहपूर्ण कार्यों का सृजन करे। हे (लक्ष्मीपुत्र) चिक्लीत! आप मेरे घर में निवास करें और माता लक्ष्मी को मेरे कुल में निवास करायें।

आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१३॥

आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१४॥

पाठभेद-(१) हरनारायण भाई पाण्ड्या-आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां हेममालिनीम्।

चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१३॥

आर्द्रां यः करिणी यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१४॥

(२) ऋग्वेद खिल भाग-पक्वां पुष्करिणीं पुष्टां पिङ्गलां पद्ममालिनीम्।

सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१३॥

आर्द्रां पुष्करिणीं यष्टीं सुवर्णां हेममालिनीम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह॥१४॥

(३) श्री विद्यार्णव तन्त्र-आर्द्रां पुष्करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्।

चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो ममा वह॥१३॥

आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टिं पिङ्गलां पद्ममालिनीम्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मी जातवेदो ममा वह॥१४॥

सूक्त १३ का अर्थ-हे संस्कारपूर्ण अग्निदेव! दयार्द्र-स्नेहार्द्र, कमलवाली, पुष्टिप्रद, पिङ्गलवर्णवाली, कमल-माला-धारी, चन्द्र-मण्डल निवासी, एवं सुवर्णमयी गजलक्ष्मी देवी को आप मेरे घर बुलायें।

सूक्त १४ का अर्थ-हे संस्कारपूर्ण अग्निदेव! दयार्द्र-स्नेहार्द्र, धर्मदण्ड वाली, नियामिका, सुन्दर वर्ण वाली, रत्नजडित सुवर्ण माला वाली, सूर्य की तरह देदीप्यमान एवं सुवर्ण स्वरूपा लक्ष्मी माता को मेरे पास लायें।

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्।

यस्यां हिरण्य प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम्॥१५॥

पाठभेद-मलप, प्रभूति, श्वाविन्देयं-संस्कार भास्कर।

अर्थ - हे सर्वज्ञ अग्निदेव! स्थिर एवं अविनाशी उस लक्ष्मी को (आप) मेरे पास बुलायें, जिसके आने से मुझे बहुत सुवर्ण, गायें, घोड़े, दासियां, नौकर आदि मिलें।

यः शुचिः प्रयतो भूत्वा जुहुयादाज्य मन्वहम्। सूक्तं पञ्चदशर्चं च श्रीकामः सततं जपेत्॥१६॥

अर्थ -लक्ष्मी की कामना वाला श्री का उपासक पवित्र एवं प्रयत्नवान् बनकर सतत घी से हवन करे और १५ ऋचा के श्री सूक्त का सतत जाप करे।

पद्मानने पद्मनि पद्मपत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि।

विश्वप्रिये विश्वमनोऽनुकूले त्वत्पादपद्मं पयि सन्निधत्स्व॥१७॥

अर्थ -हे पद्मानने, पद्मनिवासिनी, पद्म को प्रिय (या जिसे पद्म प्रिय है, पद्म के समान दीर्घ (गोल आंख वाली), विश्व को प्रिय, विश्व के मनोनुकूल-मुझे अपने पाद-पद्म में स्थान दो।

पद्मानने पद्मऊरू पद्माक्षी पद्मसम्भवे।

तन्मे भजसि पद्माक्षि येन सौख्यं लभाम्यहम्॥१८॥

अर्थ-हे कमल मुखवाली, पद्म जंघा वाली, कमल के समान आंख वाली, तथा कमल से उत्पन्न! मैं तुझ पद्माक्षी को इसलिये भजता हूँ जिससे मुझे सौख्य (सुख-समृद्धि या मित्रता) मिले।

अश्वदायी गोदायी धनदायि महाधने। धनं मे जुषतां देवि सर्वान् कामांश्च देहि मे॥१९॥

अर्थ-हे महाधन वाली! तुम अश्व, गाय, धन देने वाली हो। मेरे लिए धन जुटाओ तथा सभी कामनाओं की पूर्त्ति करो।

पुत्र पौत्र धनं धान्यं हस्त्यश्वादि गवे रथम्। प्रजानां भवसी माता आयुष्मन्तं करोतु मे॥२०॥

अर्थ-(हे लक्ष्मी!) तुम सभी प्रजाओं की माता हो। (अतः) मुझे पुत्र, पौत्र, धन, धान्य, हाथी, घोड़ा, गाय, रथ दो, तथा दीर्घायु करो।

धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसुः। धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणं धनमस्तु मे॥२१॥

अर्थ-ये सभी मेरे धन हों-अग्नि, वायु, सूर्य, वसु, इन्द्र, बृहस्पति तथा वरुण।

वैनतेय सोमं पिब सोमं पिबतु वृत्रहा। सोमं धनस्य सोमिनो मह्यं ददातु सोमिनः॥२२॥

अर्थ-मुझे सोमयुक्त करो, जिसका सोम धन होता है। (मेरे द्वारा) वैनतेय गरुड, वृत्रहन्ता इन्द्र सोमपान करें।

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभो नाशुभा मतिः। भवन्ति कृत पुण्यानां भक्तानां श्री सूक्तं जपेत्॥२३॥

अर्थ-जो पुण्यकर्मा भक्त श्री सूक्त का जप करता है, उसे क्रोध, मात्सर्य, लोभ या अशुभ मति नहीं होती।

सरसिज-निलये सरोज-हस्ते धवलतरांशुक गन्धमाल्यशुभे।
भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवन भूतिकरी प्रसीद मह्यम्॥२४॥

अर्थ-हे भगवती हरिवल्लभा! तुम कमल वन में निवास करती हो, कमल के समान हाथ हैं (या हाथ में कमल है), श्वेत वस्त्र है, तथा गन्ध माला आदि से शोभित हो। तुम मन को जानती हो तथा त्रिभुवन को ऐश्वर्य देती हो, मेरे ऊपर कृपा करो।

विष्णुपत्नी क्षमां देवीं माधवीं माधव-प्रियाम्। लक्ष्मीं प्रियसखीं देवीं नमाम्यच्युत-वल्लभाम्॥२५॥

अर्थ-मैं अच्युत-वल्लभा को नमस्कार करता हूँ, जो विष्णुपत्नी, क्षमा, देवी, माधवी तथा माधव की प्रिया हैं। वे लक्ष्मी तथा प्रिय सखी हैं (श्री या माधव की)।

महादेव्यै च विद्महे, विष्णुपत्न्यै च धीमहि। तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात्॥२६॥

अर्थ-मैं महादेवी को जानता हूँ तथा विष्णुपत्नी के रूप में समझता हूँ। वे लक्ष्मी हमें प्रेरणा दें।

श्री वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविद्याच्छोभमानं महीयते।
धनं धान्यं पशुं बहु पुत्र लाभं शत संवत्सरं दीर्घमायुः॥२७॥

अर्थ-श्री सूक्त का पाठ फल-इससे श्री, वर्चस्व, आयुष्य, आरोग्य, सुविधा, शोभा, महीयता (ऊंचा स्थान), धन, धान्य, पशु, बहुपुत्र लाभ, १०० वर्ष की दीर्घायु मिलती है।

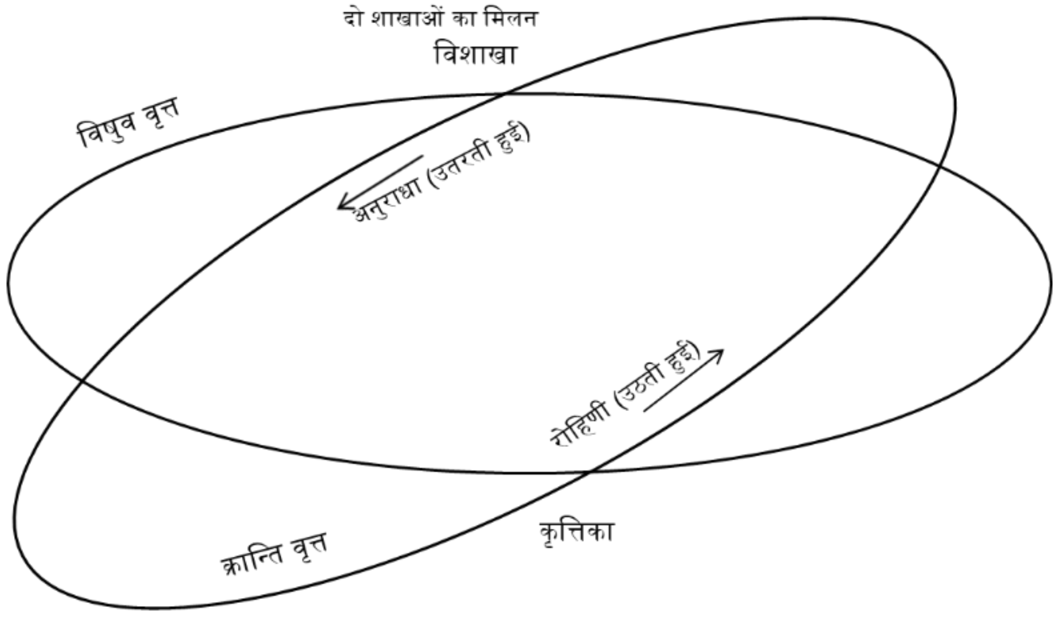
श्री के ५२ नाम-

(१) हिरण्यवर्णा, (२) हरिणी, (३) सुवर्ण-स्रजा, (४) रजत-स्रजा, (५) हिरण्मयी, (६) लक्ष्मी, (७) चन्द्रा, (८) अनपगामिनी, (९) अश्वपूर्वा, (१०) रथमध्या, (११) हस्ति-नाद-प्रबोधिनी, (१२) श्री, (१३) देवी, (१४) मा, (१५) का, (१६) सोस्मिता, (१७) हिरण्य-प्राकारा, (१८) आर्द्रा, (१९) ज्वलन्ती, (२०) तृप्ता, तर्पयन्ती, (२२) पद्मे-स्थिता, (२३) पद्मवर्णा, (२४) प्रभासा, (२५) यशसा, (२६) देव-जुष्टा, (२७) उदारा, (२८) ता, (२९) पद्मिनी, (३०) ईं, (३१) आदित्य-वर्णा, (३२) कीर्ति, (३३) ऋद्धि, (३४) गन्ध-द्वारा, (३५) दुराधर्षा, (३६) नित्य-पुष्टा, (३७) करीषिणी, (३८) ईश्वरी, (३९) मनसः-कामा, (४०) वाचाम्-आकूति, (४१) सत्या, (४२) पशूनाम्-रूपा, (४३) अन्नस्य-यशसा, (४४) मातृ, (४५) पद्म-मालिनी, (४६) पुष्करिणी, (४७) यष्टि, (४८) पिङ्गला, (४९) तुष्टि, (५०) सुवर्णा, (५१) हेम-मालिनी, (५२) सूर्या।

५२ नामों का रहस्य-शक्ति के ५२ रूपों के कई अर्थ हैं। मातृका पूजा में शरीर के विभिन्न अंगों में ५२ अक्षरों का न्यास होता है। इन अक्षरों से ही सम्पूर्ण साहित्य का जन्म होता है, जो विश्व का प्रतिरूप या वर्णन है। अतः इन अक्षरों को मातृका (माता रूप) कहते हैं। देवनागरी वर्णमाला में ४९ अक्षर हैं, जो ४९ मरुत् के प्रतीक हैं। क से ह तक ३३ व्यञ्जन ३३ देवों के प्रतीक हैं। पूरी वर्णमाला चिह्न रूप में देवों का नगर (चिति-City) है, अतः इस लिपि को देवनागरी लिपि कहते हैं। अ से ह तक के अक्षर पूरे विश्व का वर्णन करते हैं, मनुष्य शरीर विश्व की प्रतिमा है। अतः स्वयं को भी अहं कहते हैं। गीता, अध्याय १३ में शरीर को क्षेत्र कहा गया है। इसे जानने वाला आत्मा क्षेत्रज्ञ है। इसके प्रतीक रूप में क्ष, त्र, ज्ञ-ये ३ अक्षर जोड़े जाते हैं। अन्य ४०० प्रकार के संयुक्त अक्षर हो सकते हैं, किन्तु क्षेत्रज्ञ रूप में ३ ही अक्षर जोड़ते हैं। मूल अक्षर वर्ण हैं, संयुक्त या बिना संयोग के वर्ण को अक्षर कहते हैं। वाक् का इससे छोटा रूप नहीं होता, अतः यह अक्षर है (परमाणु जैसा)। क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ के ५२ अक्षरों के स्थान (शरीर के भीतर, या ५२ शक्तिपीठ) पर साधना से सिद्धि मिलती है। अतः इसे ५२ अक्षरों की माला को सिद्ध-क्रम कहते हैं। शरीर के ६ चक्रों में केवल ५० वर्ण हैं। अतः उसमें क्षेत्रज्ञ के रूप में केवल क्ष जोड़ते हैं। यह

अ से क्ष तक की माला ही अक्ष माला है, जिसे काली की मुण्डमाला के ५२ मुण्ड कहते हैं। शक्ति के ५२रूपों के प्रतीक भारत में ५२ शक्तिपीठ हैं (कुछ विभाजन के बाद पाकिस्तान में हैं)। भारत शिव-शक्ति दोनों का रूप है। अतः १२ आदित्य रूप १२ ज्योतिर्लिङ्ग हैं। शिव के वसु रूप ८ हैं (अष्टमूर्ति), गति या वायु रूप ११ रुद्र हैं (शरीर के ५ ज्ञानेन्द्रिय, ५ कर्मेन्द्रिय, १ मन भी), या तेज रूप में १२ आदित्य हैं। आदित्य तो अनन्त हैं, पर १२ मास या १२ राशियों के तेज के अनुसार इनके १२ वर्ग हैं। इसी प्रकार शक्ति रूप भारत में ५२ पीठ सती के ५२ अङ्ग हैं। भारत के ९ खण्डों में मुख्य खण्ड वर्तमान भारत था। यह अधोमुख त्रिकोण होने से शक्ति त्रिकोण है। ९ खण्डों का मूल रूप होने से कुमारिका-खण्ड है। इस त्रिकोण के ३ कोण पर महाकाली (कामाख्या), महालक्ष्मी (कोलापुर-कोला या ताला में धन रखते हैं) तथा महासरस्वती (शारदा पीठ) हैं। आकाश में सौर मण्डल के ३३ धाम हैं। ३ धाम पृथ्वी के भीतर हैं। उसके बाहर के ३० धाम क्रमशः २-२ गुणा बड़े होते गये हैं (बृहदारण्यक उपनिषद्, ३/३/२)। ऋक् १०/१८९/३ के अनुसार सूर्य का क्षेत्र ३० धाम तक है। अर्थात् सौर मण्डल पृथ्वी व्यास का २ घात ३० गुणा बड़ा है। इन ३३ धामों के प्राण ३३ देवता हैं। इसी प्रकार क्रमशः २-२ गुणा बड़े धामों के अनुसार ब्रह्माण्ड के केन्द्र से परिधि तक ४९ धाम हैं, जिनकी गति ४९ मरुत् हैं। उसके बाद के ३ धाम ब्रह्माण्ड का आभा-मण्डल है जिसे ब्रह्म-वैवर्त पुराण, प्रकृति खण्ड, अध्याय ३ में गोलोक कहा गया है, जिसमें विराट् बालक रूप ब्रह्माण्ड का निर्माण होता है।

दीपावली में लक्ष्मी पूजा-यह कार्त्तिक मास की अमावास्या को होता है। कृत्तिका का अर्थ कैंची होता है। ज्योतिष गणना में आकाश के दो वृत्तों का प्रयोग होता है-विषुव और क्रान्ति-वृत्त। इन दोनों का एक मिलन विन्दु कृत्तिका है जहां से कैंची की तरह दो शाखायें निकलती हैं। उससे १८० अंश दूर दोनों शाखायें जहां मिलतीं हैं वह द्वि-शाखा = विशाखा नक्षत्र है। आकाश में पृथ्वी का घूर्णन अक्ष २६००० वर्ष में क्रान्ति-वृत्त के उत्तरी ध्रुव नाक-स्वर्ग की परिक्रमा करता है जिसका मार्ग शिशुमार चक्र है। यह परिक्रमा भी जिस विन्दु से आरम्भ होती है उसे कृत्तिका कहा गया है।



तन्नो देवासो अनुजानन्तु कामम् .... दूरम स्मच्छत्रवो यन्तु भीताः।
तदिन्द्राग्नी कृणुतां तद्विशाखे, तन्नो देवा अनुमदन्तु यज्ञम्।
नक्षत्राणां अधिपत्नी विशाखे, श्रेष्ठाविन्द्राग्नी भुवनस्य गोपौ॥११॥
पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुर स्तात्, उन्मध्यतः पौर्णमासी जिगाय।
तस्यां देवा अधिसंवसन्तः, उत्तमे नाक इह मादयन्ताम्॥१२॥ (तैत्तिरीय ब्राह्मण, ३/१/१)

= देव कामना पूर्ण करते हैं, इन्द्राग्नि (कृत्तिका) से विशाखा (नक्षत्रों की पत्नी) तक बढ़ते हैं। तब वे पूर्ण होते हैं, जो

पूर्णमासी है। तब विपरीत गति आरम्भ होती है। यह गति नाक के (पृथ्वी कक्षा के गोल का उच्च विन्दु-वायु पुराण, ३४/९४, ऋक्, १०/१२१/५) चारो तरफ है।

इसे ब्रह्माण्ड पुराण में मन्वन्तर काल कहा है, जो इतिहास का मन्वन्तर है।

ब्रह्माण्ड पुराण (१/२/९)-स वै स्वायम्भुवः पूर्वम् पुरुषो मनुरुच्यते॥३६॥ तस्यैक सप्तति युगं मन्वन्तरमिहोच्यते॥३७॥

ब्रह्माण्ड पुराण (१/२/२९)-त्रीणि वर्ष शतान्येव षष्टिवर्षाणि यानि तु। दिव्यः संवत्सरो ह्येष मानुषेण प्रकीर्त्तितः॥१६॥

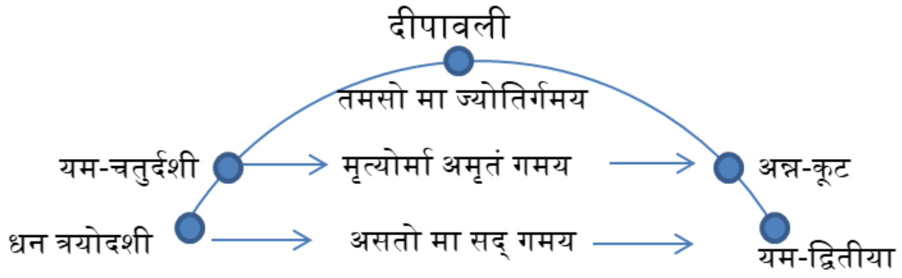
त्रीणि वर्ष सहस्राणि मानुषाणि प्रमाणतः। त्रिंशदन्यानि वर्षाणि मतः सप्तर्षिवत्सरः॥१७॥

षड्विंशति सहस्राणि वर्षाणि मानुषाणि तु। वर्षाणां युगं ज्ञेयं दिव्यो ह्येष विधिः स्मृतः॥१९॥

पृथ्वी पर भी वार्षिक रास कार्त्तिक पूर्णिमा से आरम्भ होता है। यह ऋतु चक्र का वह समय है जब सभी समुद्री तूफान शान्त हो जाते हैं और समुद्री यात्रा आरम्भ हो सकती है। अतः सोमनाथ के समुद्र तट पर कार्त्तिकादि विक्रम सम्वत् का आरम्भ हुआ था। गणित के अनुसार कार्त्तिक कृष्ण पक्ष आश्विन मास में होगा उसके बाद शुक्ल पक्ष से कार्त्तिक मास और कार्त्तिकादि वर्ष आरम्भ होगा। वर्ष और मास सन्धि पर दीपावली होती है।

इस सम्वत्सर चक्र की सन्धि पर जब नया वर्ष आरम्भ होता है दीपावली में ३ सन्धियां होती हैं-

असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृतंगमय .. बृहदारण्यकउपनिषद् (१/३/२८)



स्वयं दीपावली अन्धकार से प्रकाश की तरफ गति है जिसके लिये दीप जलाते हैं-तमसो मा ज्योतिर्गमय।

दीपावली के १ दिन पूर्व यम-चतुर्दशी होती है। १४ भुवन अर्थात् जीव सर्ग है, उनकी परिणति यम है, अतः कृष्ण चतुर्दशी को यम-चतुर्दशी कहते हैं, रात्रि तिथि के अनुसार यह शिवरात्रि भी होती है। दीपावली के एक दिन बाद अन्न-कूट होता है जो इन्द्र की पूजा थी (भागवत पुराण)। भगवान् कृष्ण ने इसके बदले गोवर्धन पूजा की थी। गोकुल में इस नाम का पर्वत है। गो-वर्धन का अर्थ गोवंश की वृद्धि है जो हमारे यज्ञों का आधार है। शरीर की इन्द्रियां भी गो हैं, जिनकी वृद्धि रात्रि में होती है जब हम सोते हैं। आत्: १ दिन पूर्व से १ दिन बाद का पर्व मृत्यु से अमृत की गति है-मृत्योर्मा अमृतं गमय।

दीपावली से २ दिन पूर्व निर्ऋति (दरिद्रता) होती है जिसे दूर किया जाता है। इसके लिये धन-तेरस पर कुछ बर्तन या सोना खरीदा जाता है। दीपावली के २ दिन बाद यम-द्वितीया है। यहां यम का अर्थ मृत्यु नहीं, यमल = युग्म या जोड़ा है। इसका अर्थ भाई-बहन का जोड़ा यम-यमी है। अतः इस दिन को भ्रातृ-द्वितीया कहते हैं जब बहन भाई की पूजा करती है। यह असत् (अव्यक्त, अस्तित्व हीन) से सत् (सत्ता, व्यक्त) की गति है-असतो मा सद् गमय।

श्रीसूक्त में निर्ऋति या अलक्ष्मी दूर करने का वर्णन है-

क्षुत्पिपासामलां ज्येष्ठामलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात्।८।

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्य पुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्।९।

अभूति, निर्णुद = यम, मृत्यु। अलक्ष्मी, असमृद्धि, क्षुत्-पिपासा = दरिद्रता, धनहीनता, भूख।

अन्न, लोक और गो की वृद्धि-

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि। पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः।१०।

कर्दमेन प्रजा भूता मयि सम्भव कर्दम। श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम्।११।

श्री-सूक्त पाठ का फल वही है जो दीपावली का फल है-

अश्वदायी गोदायी धनदायी महाधने। धनं मे जुषतां देवि सर्व कामांश्च देहि मे।१८।

पद्मानने पद्म विपद्म पत्रे पद्मप्रिये पद्मदलायताक्षि। विश्वप्रिये विश्वमनोनुकूले त्वत्पादपद्मं मयि संनिधत्स्व।१९।

पुत्र-पौत्रं-धनं-धान्यं-हस्त्यश्वादि गवे रथम्। प्रजानां भवसि माता आयुष्मन्तं करोतु मे।२०।

धनमग्निर्धनं वायुर्धनं सूर्यो धनं वसु:। धनमिन्द्रो बृहस्पतिर्वरुणं धनमस्तुते।२०।

श्री को चन्द्र के समान प्रकाशित, हिरण्य जैसा तेज और प्रभासा (चमकदार) है, जो दीपावली का दीप-दान है-

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्ण रजतस्रजाम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो ममावह।१।

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलंतीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्। तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्येऽलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणे।५।

देवी भागवत पुराण-

राध्नोति सकलान् कामान् तेन राधेति सा स्मृता स्तोत्रं राधानां पते । (१/३०/५)

गवामप व्रजं वृधि कृणुष्व राधो अद्रिव: । (१/१०/७)

दासपत्नीरहि गोपा अतिष्ठन् । (१/३२/११)

त्वं नृचक्षा वृषभानु पूर्वी: कृष्णास्वग्ने अरुषो वि भाहि । (३/१५/३)

तमेतदधारय: कृष्णासु रोहिणीषु । (८/९३/१३)

कृष्णा रुपाणि अर्जुना वि वो मदे।(१०/२१/३)

ब्राह्मणादिन्द्रराधस: पिबा सोमं ।१/१५/५)

कथं राधाम सखाय: । (१/४२/७)

अपामिव प्रवणे यस्य दुर्धरं राधो विश्वायु । (१/१७/१)

इन्द्रावरुण वामहं हूवे चित्राय राधसे ।। (१/१७/७)

मादयस्व शवसे शूर राधसे । (१/८/१८)

तुभ्यं पयो यत् पितरावनीतां राध: । (१/१२१/५)

ऋक् (१/६२/८, १/१४१/७,८; १/१४०/३; १/२२/७, १/१३४/४) में भी इससे सम्बन्धित मन्त्र हैं।

यजुष् (३३/४३):- आकृष्णेन रजसा...

भागवत:-इत्थं शरत्स्वच्छ जलं स गो गोपालकोऽच्युत: । (१०/२१/१)

हेमन्ते प्रथमे मासि नन्द व्रज कुमारिका:। (१०/२२/१)

हरिवंश:- विष्णु पर्व अध्याय २०-

कृष्णस्तु यौवनं दृष्ट्वा निशि चन्द्रमसो वनम्। शारदीं च निशां रम्यां मनश्चक्रे रतिं प्रति ॥१५॥

तास्तु पङ्क्तीकृता: सर्वा रमयन्ति मनोरमम्। गायन्त्य: कृष्णचरितं द्वन्द्वशो गोपकन्यका: ॥२५॥

एवं स कृष्णो गोपीनां चक्रवालैरलंकृत:। शारदीषु सचन्द्रासु निशासु मुमुदे सुखी॥३५॥

तैत्तिरीय ब्राह्मण :- नक्षत्राणामधिपत्नी विशाखे श्रेष्ठाविन्द्राग्नी भुवनस्य गोपौ ।

राधा "वृषभानु" और "कृत्तिका" की पुत्री हैं। वेदों के रहस्य को ही भागवत और गीता में वर्णित किया गया है। गो किरणें हैं। व्रज - किरणों का स्थान द्यौ है। विशाखा से भरणी तक वृत्ताकार स्थित गोपियाँ हैं। राधा धन अन्न समृद्धि आह्लादिनी हैं। सिद्धि सफलता भूमि सुवर्ण राज्य विजय सुख बल विद्या हैं। मेघरूपी गोवर्धन पर्वत (अद्रि) वर्षा की समाप्ति पर शरद ऋतु की शारदी पूर्णिमा पर कृष्ण ने रास के लिये कहा।

श्रीसूक्त के कुछ विशिष्ट शब्द-

(१) हिरण्यवर्णा-(१) सोने के रंग वाली। (२) हिरण = हि + रण। रण में भ्रमरी की तरह नाद करने वाली। (३) निमेष-उन्मेष

के बीच के अल्प समय में (हि=) स्थित होने वाली। (४) वर्णा-वर्णों की जननी-परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी का स्थान प्राप्त कर उन्हें उत्पन्न करती हैं।

(२) हरिणी-(१) हरित वर्ण की। (२) हल्दी जैसी आभा वाली-पृथ्वी। (३) हिरणी जैसी शीघ्र गति वाली, चञ्चल, सुन्दर, मृगनयनी। (४) हरि की पत्नी। (५) नित्य युवती। (६) भक्ति के दबाव में बन्धने वाली। (७) मृग चर्म को ओढ़ने या बिछाने वाली। (८) हरि के मध्य भाग से संश्लिष्ट। (९) हरि के कार्यों में लगाने वाली, या स्वयं हरि के कार्य में लगने वाली। (१०) पाप हरने वाली।

(३) सुवर्णरजतस्रजाम्-(१) सोने चान्दी के फूलों या कमलों की माला पहनी हुयी। (२) तेज रूप गहने वाली, (३) विवेक-वैराग्य रूप फूलों की माला वाली।

(क) सुवर्णस्रजाम्-(४) सु (शोभित) वर्णों (अकार आदि) का सर्जन करने वाली। (५) विश्व (विष्णु) का वरण करने वाली।

(ख) रजतस्रजाम्-(६) देवरूप मालायें लक्ष्मी जी से शोभित होती हैं।

(४) चन्द्राम्-(१) चन्द्र की तरह प्रकाशित, (२) चन्द्र जैसी आह्लादक, पृथ्वी, (३) चन्द्रमुखी, (४) चन्द्र में विद्यमान चन्द्रिका, (५) चन्द्रमा में जैसे वृद्धि क्षय होता है, उसी प्रकार लक्ष्मी जी धन देती तथा लेती भी हैं। (६) शुक्ल पक्ष की उन्नति या कृष्ण पक्ष के ह्रास से निरपेक्ष। (७) चं = घूमती हुई, द्रा = दूर करने वाली। भक्तों के पापों को दूर करती हैं। (८) चन्द्र के समान भक्तों को द्रवित होने वाली। (९) समाधि की तुरीय अवस्था को चन्द्र की तरह भासित करने वाली। (१०) चन्द्र नाड़ी में स्थित। (११) चन्द्र की तरह सन्तोष कारक प्रकाश वाली, (१२) क्षीर समुद्र के मन्थन के समय जब लक्ष्मी जी उदित हुईं तो उनकी चन्द्र नामक किरण पहले उदित हुई। उस समय ऋषियों ने लक्ष्मी जी को चन्द्रा कहा था।

(५) **हिरण्मयी**-(१) सुनहरे रूप की, (२) सुवर्ण देह वाली, (३) धन-भाग्य से परिपूर्ण, (४) हिरण्यरेतस् शिव की हिरण्मयी शक्ति, (५) पवित्रता युक्त, (६) षड् विकार से मुक्त तैजस शरीर, (७) मूलाधार से द्वादशान्त (हृदय का अनाहत चक्र) तक लक्ष्मी हिरण्मयी रूप में उदित, (८) हिरण्यमण्डल (सूर्य या सृष्टि का मूल हिरण्यगर्भ) में स्थित।

(६) लक्ष्मी-(१) लक्षणयुक्त, (२) लाभयुक्त, (३) शोभा सम्पत्ति रूप। (४) ज्ञान, ऐश्वर्य, सुख, आरोग्य, धन, धान्य, जय आदि लक्ष्म (चिह्न) के कारण उसे लक्ष्मी कहते हैं। (५) ब्रह्मविद्या। (६) सर्वभूतों के शुभ-अशुभ देने वाली (लक्ष दर्शनाङ्कयोः-धातुपाठ, १०/५, लक्षयति इति लक्ष्मी)। (७) श्री हरि की लक्ष्मी। (८) यह सभी प्रमिति (चेष्टा) का लक्ष्य है। (९) ल = देने वाली, लेने वाली (ला आदाने, धातुपाठ, २/५१)। क्षिप् प्रेरणे (४/१५) = दाता को प्रेरणा देने वाली। (१०) ल = लय (स्थिति एवं संहार) में प्रकृति को प्रेरणा देने वाली। (१२) अव्यक्त एवं व्यक्त सत्त्वों में स्थित हो कर सदा प्रेरणा देने वाली। (१२) लक्ष्य तक पहुंचाने वाली। उसमें लीन हो कर प्रेरणा देने वाली (लीङ् श्लेषणे, धातुपाठ, ४/२९)। (१३) क्षमा देने वाली। (१४) सज्जनों के पापों को नष्ट करने वाली। (१५) भूतों को जानने वाली, सभी को मापने वाली (माता)। क्षम् सहने (धातु पाठ, १/३०१), मा माने (धातु पाठ, २/५५, ३/६)। (१६) ऐसे विविध अर्थों को देख कर कपिल मुनि ने कहा-मा लक्षय (मेरी तरफ देखो)। इससे लक्ष्मी नाम हुआ।

(७) जातवेद-अग्नि का नाम। (१) जात प्रज्ञान, (२) सर्वज्ञ, (३) देवों का होता होने के कारण आवाहन क्रिया उसके अधीन है (विद्लृ लाभे, धातुपाठ ६/१४१)। (४) सन्तुष्ट अग्नि यजमान को लक्ष्मी देती है। (५) अग्नि रूप परमेश्वर की उपासना से महालक्ष्मी मिलती है।

(८) अनपगामिनी-(१) अपगमन नहीं करने वाली अर्थात् स्थिर। (२) मुझे (मन्त्रद्रष्टा ऋषि) को छोड़ कर नहीं जाने वाली। (३) भगवान् को नहीं छोड़ने वाली। (४) अविनाशी ऐश्वर्य युक्त।

(९) विभिन्न सम्पत्ति-गाम्-गाय, यज्ञ सम्पत्ति। हिरण्य-स्वर्ण आदि सम्पत्ति। अश्व-घोड़े आदि वाहन। पुरुष-पुत्र, मित्र, दास आदि। हितैषी मित्र, निष्ठावान् सेवक।

(१०) अश्वपूर्वा-(१) अश्व के पूर्व। जब लक्ष्मी आती है तब अश्व आदि सम्पत्ति हो जाती है। (२) अश्व जिसके पहले है। अश्व गति देने का साधन है। जब तक कर्म या श्रम नहीं किया जाय, लक्ष्मी नहीं आती। (३) इन्द्रियों को अश्व कहा गया है। उनके पूर्व रह करनियन्त्रित करने वाली। जितेन्द्रिय के पास ही लक्ष्मी रहती है। (४) नाद अभ्यास में पहले अश्व की ध्वनि सुनाई देती है। चित्तवृत्ति में सहायक।

(११) रथमध्या-(१) ऐसी सेना रूप जिसके मध्य भाग में रथ (वाहन) हैं। (२) रथ के मध्य में सञ्चालन के लिए स्थित। (३) शरीर रूपी रथ की सञ्चालक।

(१२) हस्तिनाद प्रबोधिनी-(१) जब लक्ष्मी आती हैं, उनके आने का ज्ञान हाथी के नाद से होता है। (२) हाथी के शब्द से जाग्रत होने वाली। (३) हस्तिबल में संयम करने से बल होता है (योग सूत्र, ३/२४-बलेषु हस्तिबलादीनि)-उसमें संयम की क्रिया। हस्तिनादविनादिनी-व्योमरन्ध्र में पहुंचने पर हाथी जैसी ध्वनि होती है। हस्तिनादप्रमोदिनी-हस्तिनाद से प्रसन्न होने वाली या प्रसन्न करने वाली।

(१३) देवी-(१) दीप्यमान, चमकदार। (२) दीप्ति। (३) दान आदि गुणवाली। (४) सामर्थ्य वाली। (५) देव की पत्नी, श्रीदेवी = पृथ्वी। (६) दे = देने वाली, अवि = रक्षण करने वाली।

(१४) श्री-(१) आश्रय करने योग्य (श्रिञ् सेवायाम्, धातुपाठ, १/६३८)। (२) भक्तों की वाणी सुनने वाली (श्रु श्रवणे, धातुपाठ, १/६७५)। (३) सज्जनों के पाप को नष्ट करने वाली (शॄ हिंसायाम्, धातुपाठ, ९/१७)। (४) गुणों से विश्व का विस्तार करने वाली (शॄ विस्तारे)। एक स्तुति में-आशासु राशी भवदङ्गवल्ली = दिशाओं का समूह आपका शरीर है। (५) शाश्वत शरण रूपा। (६) देव जिसे श्रद्धा (श्र) से चाहते हैं (ई = ईप्सिता)। (७) श्री अक्षर के ४ खण्ड ४ प्रकार की वाणी के रूप हैं-श (शान्ता या परा वाक्), मूलाधार में, र् = रन्ती (नाभि में पश्यन्ती वाक्), इ = प्रेरणी मध्यमा वाक्, अनुस्वार = बाहर गूंजती वैखरी वाक्। (८) विष्णु का आश्रय लेने वाली। (९) शक्तियों को आश्रय देने वाली। (१०) आश्रितों का पाप नाश करने वाली, या कामना पूर्ण करने वाली (रा दाने, धातुपाठ, २/१०)। (११) अपनी शक्ति से प्रकाश देने वाली या शन्तमा = मङ्गल रूपा। (१२) र् = रति, ई = ईप्सित, सारे विश्व की ईप्सित।

(१५) मा- (१) मेरा। (२) माता रूप में लक्ष्मी। (३) विश्व की माप (माङ् माने, धातुपाठ, २/५५, ३/६)। (४) जिसमें विश्व का लय होता है। (५) सर्वव्यापी होने के कारण सभी उसे अपना (मा = मेरा) कहते हैं। (६) सभी को इधर-उधर फेंकने वाली (मिञ् प्रक्षेपणे, धातुपाठ, ५/४)। (७) सर्व संहारक (मीङ् हिंसायाम्, धातुपाठ, ४/२७)।

(१६) काम्-(१) वाणी तथा मन से जिसका ज्ञान नहीं होता। (२) अव्यक्त, अमूर्त्त ब्रह्म। (३) सुख स्वरूपा। (४) चिन्मयी लक्ष्मी, जो अन्तः करण में आवाज करती है (कै शब्दे, धातुपाठ, १/६५३)। (५) वाणी, वाक्यरूपा (वाग्देवी)। (६) सभी वेद जिसके बारे में जिज्ञासा करते हैं-का = कौन है? (७) क = ब्रह्म के रूप वाली। कस्मै देवाय हविषा विधेम (ऋक्, १०/१२१/१)- कर्त्ता रूप देव के लिए हवि दें। जड़ चेतन गुण दोष मय विश्व कीन्ह करतार (क)-रामचरितमानस (१/६/०)। (८) कर्त्ता रूपिणी।

(१७) सोस्मिता-(१) उत्तम मन्द-स्मित वाली। (२) ब्रह्म (उत्) का विकास ही जिसका स्मित है। (३) जो भोगों में लिप्त नहीं है, उसके यहां लक्ष्मी जाती हैं।

(१८) हिरण्यप्राकारा-(१) सुवर्ण के आवरण वाली, आकृति वाली। जिसके चारों तरफ सुवर्ण फैला है। (२) हिरण्य तेज वाली। (३) सभी प्रकार की अनुकूलता से युक्त। (४) हि = हितकारी, र = रम्य, प्राकार = प्रकृति वाली।

(१९) आर्द्रा-(१) क्षीर समुद्र से उत्पन्न होने के कारण भींगी हुई। (२) मस्तक के अधोमुख पद्म से निकलती हुई अमृतधारा से भीगी हुई। (३) शीतल गुण वाली, स्नेहपूर्णा। दयार्द्र। भक्त के लिए पुत्रवत् पक्षपात करने वाली। (४) दूर तक द्रवित करने वाली (आरात् द्राविणी)।

(२०) ज्वलन्ती-(१) प्रकाशमान, ज्योति या चैतन्य रूपा। (२) भक्त की चिन्ता से जलने वाली। (३) काम, क्रोध, मद, मोह, मत्सर को जलाने वाली। (४) अपनी कान्ति से जगत् को भासित करने वाली। (५) परा वाणी के रूप में शिखा रहित ज्वाला। (६) पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी रूप में ३ शिखा की ज्वाला। (७) क से म तक २५ शिखा वाली। (८) य से ह तक ७ शिखा वाली। (९) ह, ल, क्ष-३ शिखा वाली।

(२१) तृप्ता-(१) तृप्ता या प्रीता। भक्ति, पूजा आदि से तृप्त होने वाली। (२) सदा तृप्त रहने वाली, पूर्णकाम। (३० विष्णु में प्रीति वाली।

(२२) तर्पयन्ती-(१) तृप्त करने वाली। मनोरथों को पूर्ण कर भक्तों को सदा तृप्त रकने वाली। (२) अपने गुणों से भगवान् विष्णु को तृप्त करने वाली तथा विष्णु के गुणों से स्वयं तृप्त होने वाली। (३) ७२,००० नाड़ियों में प्राण का प्रवाह कर तृप्त करने वाली। (४) अन्तःकरण को तृप्त करने वाली।

(२३) प द्मे स्थिता-(१) कमल में स्थित। (२) पानी में कमल अनासक्त रहता है, अतः लक्ष्मी अनासक्त को ही मिलती हैं। (३) कमल जैसे निर्लेप स्वभाव वाली। (४) आकाश में पृथ्वी ही पद्म है क्योंकि वह विराट् पुरुष के पद्म से उत्पन्न हुई है, या सभी के पद रखने का आधार है। उस प द्म रूपी पृथ्वी की भौतिक सम्पत्ति। (५) हृदय कमल मेंप्रकट। (६) काल रूपी पद्म का कलन करतीहैं।

(२४) पद्मवर्णा-(१) कमल जैसी कान्ति वाली। (२) श्वेत-अरुण मिश्र रंग वाली। (३) निर्लोभी भक्त के प्रति लक्ष्मी का स्नेहपूर्ण मुख श्वेत-अरुण होता है। जीव जब शिव से मिलता है, अरुण-श्वेत वर्ण का होता है। (४) लक्ष्मी आत्मतेज से ईश्वर द्वारा वर्ण वाली बनाती है। (५) पद्माकार वर्णों द्वारा लक्ष्मी का शरीर शोभित है।

(२५) प्रभासाम्-(१) सुशोभित। (२) प्रेम रूप वैभव की आभा से सम्पन्न। (३) श्रेष्ठ ज्ञान वाली। (४) अति कान्ति वाली। (५) प्र + भासा = आकर्षक प्रकाश वाली, अन्य प्रकाश को मन्द करने वाली। (६) प्रभा + अस = प्रभाओं को फेंकने वाली (असु क्षेपणे, धातुपाठ, ४/९९)। लक्ष्मी की ६ प्रभा हैं-श्रद्धा, सोम, जल, अन्न, वीर्य, हवि। इनको वह स्वर्ग, पर्जन्य, पृथिवी, पुरुष, स्त्री, वैश्वानर अग्नि में प्रक्षिप्त करती रहती हैं।

(२६) यशसा ज्वलन्तीम्-(१) ज्वलन्ती का अर्थ (२०) में बताया है। कीर्त्ति से देदीप्यमान। (२) यशस्वी भक्तों को देख कर प्रसन्न होने वाली। (३) यशसा-विद्या, दान आदि से उत्पन्न यश का भाजन। (४) स्वयं को ६ अग्नि में विभक्त कर श्रद्धा आदि ६ हवि ग्रहण करती हैं।

(२७) देवजुष्टाम्-(१) देवों से सेवित, सात्विक मनुष्यों, मुमुक्षुओं द्वारा सेवित। (२) देव या विष्णु की प्रीति प्राप्त। (३) लक्ष्मी का आश्रय लेकर इन्द्रियां विषयों में आसक्त (जुष्टा) होती हैं।

(२८) उदाराम्-(१) सर्वव्यापी। (२) प्रगल्भ। (३) कर्तृत्व तथा विश्वास का मिश्रण उदारता है। (४) उदार विद्या। (५) लक्ष्मी से ही महर्षियों का विज्ञान तथा मनुष्यों की शक्तियां प्रकट हुई हैं। लक्ष्मी उन्हें उदारतापूर्वक देती हैं।

(२९) पद्मिनीम् + ईम्-(१) कमल-लता रूप। (२) कमल के आकार वाली। (३) हाथ में कमल वाली। (४) कमल में बैठी हुई। (५) पद्मनेमीं, पद्मनेमिं-पद्म रूपी नेमि या पद्म रूप की सीमा।

ईम्-(१) ई अक्षर लक्ष्मी का वाचक है। (२) इण् गतौ (धातुपाठ, २/३८) या ईख या ईङ्ख् (ईंखि) गतौ (धातुपाठ, १/८८) आदि के अनुसार विश्व में जितनी गति दीखती है, वह ई या लक्ष्मी है। (३) प्रत्यक्ष जगत्-ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः (गीता, १७/२३)। ॐ तत् सत् = ईं ॐ श्रीः। यहां तत् = ईं = जगद्-ईश = जीवात्मा का एकत्व। यह गुप्त प्रणव वेदों में कई बार आया है-

य ईं चकार न सो अस्य वेद, य ईं ददर्श हिरुगिन्नु तस्मात् (ऋक्, १/१६४/३२)-ई = यह, ऊ = वह। निकट का दृश्य जगत् ई या यह है। दूर का स्रष्टा ऊ या वह है। जिसने ईं या जगत् बनाया, वह भी इसे नहीं जानता। जिसने इसे देखा उससे यह छिप

गया (तस्मात् हिरुक् इत् नु। नु = निश्चयात्मक शब्द)।

तिस्रो मातृस्त्रीन् पितृन् बिभ्रदेक ऊर्ध्वतस्थौ नेमवग्लापयन्ति। (ऋक्, १/१६४/१०)-३ माता (३ पृथ्वी-ग्रह, सौर मण्डल, ब्रह्माण्ड) तथा ३ पिता (इनके ३ आकाश) को धारण एक ही करता है तथा इनके ऊपर स्थित है। वे सभी (३+३) ईं उसे नीचा नहीं देखते (न+ईं+ अव-ग्लापयन्ति)।

यह गुहा या परोक्ष अन्तरात्मा का दर्शक है-

य ईं चिकेत गुहा भवन्तमा यः ससाद धारामृतस्य (ऋक्, १/६७/४)।

आयातु वरदा देवी अक्षरं ब्रह्म सम्मितम्। गायत्री छन्दसां माता इदं ब्रह्म जुषस्व मे। (तैत्तिरीय आरण्यक, १०/३४, नारायन उपनिषद्, १५/१)

इदं ब्रह्म = यह ब्रह्म ही ईं है।

ईङ्काराय स्वाहा। ईङ्कृताय स्वाहा। (तैत्तिरीय संहिता, ७/१/१९/९) = ईं तथा उसे निर्माण करने वाले के लिए स्वाहा (स्वागत)।

(३०) ताम्-(१) यह ऊपर के ॐ तत् सत् में तत् का स्त्रीलिङ्ग रूप है। प्रत्यक्ष विश्व जिसका निर्देश किया जाता है। तत्, या ता = वह। (२) जगत् का या ५ कृत्यों का विस्तार करने वाली (तनु विस्तारे, धातुपाठ, ८/१)। (३) जगत् का पालन करने वाली (तायृ सन्तानपालनयोः, धातुपाठ, १/३२९)-इसी से ताई (बड़ी माता) हुआ है जो सन्तान जैसा पालन करे। (४) सहायक, आश्रय देने वाली या श्रद्धा का पात्र (तनु श्रद्धोपकरणयोः, धातुपाठ, १०/२६६)।

(३१) आदित्यवर्णा-(१) सूर्य जैसे वर्ण वाली। (२) तेज, यश, श्री द्वारा आदित्य को वर्ण (रंग) देने वाली। (३) आदित्य में उसे अ से क्ष तक के वर्णों के रूप में रह कर वे भूत-भविष्य के अर्थों को प्रकाशित करती हैं। (४) आदि वर्ण ॐकार स्वरूपिणी। (५) वैखरी वाणी के रूप में प्रकट हो कर काम दुधा गाय हैं। (६) पितृ, देव, मनुष्यों का चक्षु।

(३२) तपसोऽधिजातो बिल्व वृक्षः-बिल्व के नीचे लक्ष्मी ने तपस्या की थी। या बिल्व लक्ष्मी के कर से उत्पन्न हुआ (वामन पुराण, १७/८)। बिल्व में पार्वती का वास (स्कन्द पुराण, ६/२४७/१)। बिल्व को श्री-फल भी कहते हैं।

(३३) कीर्त्ति- (१) यश। (२) कीर्त्ति के अभिमानी देवता = दक्षकन्या। (३) लोक में किरन बिखेरने वाली (कॄ विक्षेपे, धातुपाठ, ६/११८)। (४) देवसखा वायु तथा मूलाधार की वह्नि (मणि) के साथ वह द्वादशान्त कमल में पहुंचती है, अतः मुनियों ने उसकी कीर्त्ति गायी है।

(३४) देवसखः-कुबेर। जो धनी होने के साथ देवों का मित्र भी हो। कुबेर ने शङ्कर की तपस्या कर उन्हें प्रसन्न किया था, अतः उनके मित्र हैं। जिस पर लक्ष्मी कृपा करती हैं, कुबेर उसी को धन देते हैं।

(३५) मणिना सह-(१) चिन्तामणि के साथ। (२) कोषाध्यक्ष मणिभद्र के साथ। (३) मूलाधारगत वह्नि।

(३६) ऋद्धि-(१) सभी वस्तुओं की समृद्धि। ८ ऐश्वर्य। (२) ऋद्धि की अभिमानी देवी लक्ष्मी की दासी है। ऋद्धि के ७ गुण हैं -सत्य, ऋत, उग्रता,दीक्षा, तप, ब्रह्म, ज्ञान, यज्ञ। (३) वृद्धि-विष्णु के गुणों से वृद्धि। सुषुम्ना मार्ग से क्रमशः वृद्धि होती है। (४) योगियों को सम्मान देती है। (अर्घ् पूजायाम्, धातुपाठ, १/४९२)

(३७) अलक्ष्मी-(१) लक्ष्मी का अभाव-भूख, प्यास से मलिन, भूति, समृद्धि से वञ्चित। (२) लक्ष्मी की बड़ी बहन-इनका विवाह नहीं हो रहा था, अतः विष्णु छोटी बहन से विवाह नहीं कर पा रहे थे। उद्दालक के घर में अनेक विपत्तियां आयीं जिनसे दुखी हो कर अलक्ष्मी को पीपल के नीचे छोड़ कर तपस्या करने चले गये। लक्ष्मी जी नारायण के साथ प्रति शनिवार को बड़ी बहन से मिलने पीपल के नीचे आती हैं। अतः शनिवार को पीपल की पूजा की जाती है (पद्म पुराण, ६/१/१६)। (३) मृत्यु-भार्या, १४ पुत्रों की माता, निर्ऋति उपनाम (मार्कण्डेय पुराण, ५०/३२)

(३८) गन्धद्वारा-(१) गन्ध गुण के लक्षण वाली। सभी सुगन्धों का मूल। (२) पृथ्वी आदि ५ महाभूतों के गन्ध (रस, रूप,

स्पर्श, शब्द) रूपी द्वारों से ज्ञात होने वाली।

(३९) दुराधर्षा-(१) अपराजेय, दु:सह, जिसे रोका नहीं जा सके। (२) शुद्ध संवित् क्रिया-रूपा नारायणी को कोई बाधित नहीं कर सकता। (३) प्रयत्न करने पर भी जिसे साथ नहीं लाया जा सके।

(४०) नित्यपुष्टा-(१) अन्न आदि से सदा पुष्ट। (२) सभी जीवों की पोषक सामग्री से युक्त। (३) सद्‌गुणों से पुष्ट। (४) नित्य शाश्वत विष्णु से पुष्ट। (५) अपनी संवित् चेतना से जड़ वस्तु को पुष्ट करती है।

(४१) करीषिणी-(१) करीष-गाय के गोबर से सूखे कण्डे। उनसे युक्त, अर्थात् गाय, अश्व आदि पशुओं से समृद्ध। (२) मोक्षोपयोगी विवेक आदि सामग्रियों वाली। (३) जिस पृथ्वी में गोबर के कण्डे प्रचुर हों (पशु सम्पत्ति से भरी) वैसी भूमि चाहिए। (४) करी + ईषिणी = कर्त्ता को देखने की इच्छा वाली। (५) करिन् = हाथी के ऊपर बैठ कर चलने वाली (इष् गतौ, धातुपाठ, ४/२९)। (६) सृष्टि करने वाली (डुकृञ् करणे, धातुपाठ, ८/१०)। (७) सृष्टि का अन्त करने वाली (कॄ हिंसायाम्, धातुपाठ, ९/१४)

(४२) सर्व भूतानाम् ईश्वरीम्-(१) सर्व भूतों की स्वामिनी (२) सभी प्राणियों की अधिष्ठाता। (३) ईश्वरी के ३ अर्थ हैं-समर्थ तथा सुन्दर। हमारे घर सुन्दर लक्ष्मी आये। लेकिन वह समर्थ नहीं हो तो लोग उसे तंग करेंगें। (४) ईश + वर = जो विष्णु के साथ रह कर वर देती है। (५) ईश + व = जो ईश तथा वनिता (आदरणीय) है। (६) श् = विनाशक। जो पापों का विनाश कर वर देती हैं।

(४३) मनसः काममाकूतिं-इससे मिलती पंक्ति वाज. यजु (३९/४) में है-मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय। पशूनां रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा। (१) सभी मनोरथों की आश्रय-स्थली। (२) भगवान् विष्णु के मन का काम स्वयं महालक्ष्मी हैं।

आकूति-सन्तोष, प्रयत्न, आक वन, सङ्कल्प, मोक्ष प्राप्ति का निश्चय।

वाचः आकूति-वाणी का अभिप्राय।

मन की आकूति या सामर्थ्य, भण्डार का वर्णन शिव सङ्कल्प सूक्त (वाज. यजु. ३४/१-५) में है-

तन्मे मनः शिव सङ्कल्पमस्तु।

वाचः सत्यम्-वाणी की यथार्थता, प्रामाणिक वाणी।

सत्य = सत् + त्य - जिस प्रमाण के द्वारा जगत् सत् (सत्तायुक्त) और त्य (स्वयंसिद्ध) दीखता है, वह महालक्ष्मी हैं (लक्ष्मी तन्त्र)। बृहदारण्यक उपनिषद् (५/५/१) में भी इसी प्रकार है-तदेतत् त्र्यक्षरं सत्यमिति स इत्येकमक्षरं तीत्येकमक्षरं यमित्येकमक्षरं प्रथमोत्तमे अक्षरे सत्यं मध्यतोऽनृतं तदेतदनृतमुभयतः सत्येन परिगृहीतँ सत्य भूयमेव भवति । (शतपथ ब्राह्मण, १४/८/६/२)

(४४) पशूनां रूपम्-(१) पशुओं का रूप दूध आदि है। (२) हाथी, घोडे, गाय, भैंस आदि पशुओं की अधिकता। (३) मोक्षोपयोगी विवेक आदि सामग्री का समूह। (४) रूपवान् पशु। (५) लक्ष्मी की कृपा से सभी पशुओं या जीवों के साथ आत्मीयता हो। (६) सभी जीवों की चैतन्य शक्ति।

(४५) अन्नस्य रूपम्-(१) भोज्य अन्न का रूप। (२) ज्ञान के श्रवण आदि साधनों का समूह। (३) अन्नस्य यशः-सभी प्रकार के अन्नों का यश या सार तत्त्व। (३) महालक्ष्मी के सोम से सभी प्रकार के अन्न होते हैं।

(४६) कर्दम-(१) लक्ष्मी का पुत्र। पुत्र के साथ बुलाने पर लक्ष्मी चिरकाल तक रहेंगी। (२) कर्दम = मिट्टी, पृथ्वी। महालक्ष्मी से ही पृथ्वी की सृष्टि हुई है जिस पर प्रजा उत्पन्न हुई।

(४७) पद्ममालिनीम्-(१) कमल माला पहनी हुई। (२) दैवी सम्पत् समूह जिसने धारण किया है। (३) सुषुम्ना के सभी चक्र-पद्मों के रूप में व्याप्त। (४) जो प्रकृति, पुरुष और सनातन काल रूपी पद्मों को धारण करती है।

(४८) मातरम्-(१) जनन करने वाली, हित चिन्तन करने वाली माता। (२) वर्ण, कला, तत्त्व, मन्त्र, पद, और भुवन-इन षडध्वों को अलग-अलग बताने वाली (मिमे)। (३) सर्व मानों से जगत् का संहार करने वाली (मीये, मीङ् हिंसायाम्, धातु पाठ, ४/२७, या मीञ् हिंसायाम्, ९/४)। (४) सर्व प्रमाणों में मिति (ज्ञान) स्वरूप। (५) जिस लक्ष्मी के अन्दर सब समा जाता है (माङ् माने शब्दे च, २/५५, ३/६)। (६) तृ = तारने वाली-भवसागर से पार करने वाली। सभी प्रकार के दोषों से पार करने वाली। सर्व भूतों के चित्तों में तैरने वाली। स्वयं मेघ बन कर जगत् को डुबाने वाली।

(४९) आपः सृजन्तु-जल का सृजन करें। सर्वप्रथम रस रूप जल था। इसमें २ अक्षर हैं-ज = जिससे सभी जन्म लेते हैं। ल = जिसमें सभी का लय होता है।

(५०) चिक्लीत-लक्ष्मी का पुत्र। भौतिक सम्पत्ति के लिए कर्दम तथा जल वैभव के लिए चिक्लीत को बुलाया। यह कामदेव है। यह चित्त में लगा है, अतः चिक्लीत है।

(५१) पुष्करिणीम्-(१) पुष्कर हाथी की सूंड का अग्र भाग है, उससे अभिषिक्त। (२) कमल वाली, जिसके हाथ में कमल है। (३) स्वयं कमल लता रूपा। (४) ममता तथा गर्व-२ हाथी के समान बली तथा विशाल हैं। इनके आगे आशा और प्रीति नाम के २ स्वर्ण कलश हैं। वे तृप्ति रूपी जल से भरे हैं। इन कलशों से २ हाथियों द्वारा महालक्ष्मी का अभिषेक होता है। इस देवी के साथ आनन्द रूप विष्णु हैं। दोनों हाथी यहां शान्त हो जाते हैं, मन को विचलित नहीं करते। श्री जगन्नाथ के लिए भी यही प्रार्थना है-आहे नील शैल प्रबल मत्त वारण (नीलाचल के मदमत्त हाथी)। (५) पुष् + करिणीम् = पोषण करने वाली। (६) पुष्कर = कमल। कमल वाली।

(५२) पुष्टिम्-(१) पुष्टि की अधिष्ठात्री देवी। (२) स्वयं पुष्टि रूपा। (३) पोषण करने वाली-जीवन, सभ्यता के सभी अंगों को पुष्ट करने वाली।

(५३) यष्टिम्-(१) छड़ी-दण्ड स्वरूपा। (२) रसोई घर आदि में कार्य के लिए दण्ड। (३) सभी देवों की इष्ट है-इषु इच्छायाम्, धातुपाठ, ६/६१)। (४) सभी देव जिसका यजन करते हैं (यज् देवपूजासङ्गतिकरणेषु, धातुपाठ, १/७२८)। (५) जो सदा हरि के साथ रहती हैं। (६) सभी कामनाओं को देने वाली। (७) सभी का आधारभूत अथर्व वेद (१०/७)-स्कम्भ सूक्त में भी स्कम्भ (स्तम्भ = यष्टि) को जगत् का आधार कहा गया है। इष्टिम् = यज्ञ रूपा।

(५४) तुष्टिम्-(१) स्वयं तुष्टि रूपा-या देवी सर्व भूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता, नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः। (दुर्गा सप्तशती, ५/६८-७०)। (२) अपने गुणों से विष्णु को सन्तुष्ट करने वाली। (३) विष्णु के गुणों से स्वयं सन्तुष्ट होने वाली। (४) कर्मों द्वारा उसकी स्तुति से लक्ष्मी में सबको सन्तुष्टि मिलती है।

(५५) सुवर्णाम्-(१) सुन्दर वर्ण (रंग) वाली। (२) सुवर् नयति इति सुवर्णा-सिद्धों को अपर स्वर्ग (सुवः) और परमपद (पर सुवः) ले जाने वाली। (३) नारायणी जिसमें सभी वर्ण (अक्षर) शोभित हैं। (४) स्वयं नित्या सरस्वती बनकर सुन्दर वर्णन करने वाली (वर्ण क्रिया विस्तार गुण वचनेषु, धातु पाठ, १०/३३५)

(५६) हेममालिनीम्-(१) रत्नजटित सुवर्ण माला वाली। (२) सुवर्ण कमलों की माला वाली। (३) नारायणी स्वयं पृथ्वी बन कर हेम पर्वत धारण करती हैं, अतः ब्रह्मा ने हेममालिनी कह कर उनकी स्तुति की थी। (४) हेम किरण को कहते हैं, उसकी माला वाले सूर्य को हेममाली कहते हैं (तिथ्यादि तत्त्व, भविष्य पुराण, ब्राह्म खण्ड, २१/३२)। हेममाली सूर्य का तेज हेममालिनी है।

(५७) सूर्याम्-(१) सूर्य की तरह प्रकाशित। (२) सूर्य स्वरूपा विद्या, विज्ञान आत्मा। (३) ऐश्वर्य स्वरूपा। (४) सू + र् + या = सर्व जीवों के हित के लिए तत्त्व पद्धति को उत्पन्न करने वाली। षु (सु प्रसवैश्वर्ययोः, धातुपाठ, १/६७४, २/३४ रमु क्रीडायाम्, १/५९२)-प्राणियों का भोगों में रमण कराने वाली, यत्रि (यन्त्र) सङ्कोचने (१०/३)-काल द्वारा नियन्त्रण करने वाली। (५) सूर् + या = सूरि या विद्वानों का हित करने वाली (हित अर्थ में यत् प्रत्यय)